

संविधान संशोधन प्रक्रिया (अनुच्छेद 368)

अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा, स्वीटज़रलैंड आदि सभी परिसंघात्मक संविधानों की तरह भारतीय संविधान में भी संशोधन प्रक्रिया अत्यंत जटिल एवं अनम्य है। प्रोफ. के.सी. हवेयर ने इस प्रक्रिया पर कहा कि “अपरिवर्तन शील होने के नाते विकास की गति से मेल नहीं रख पाता है”।

जहाँ तक भारतीय संविधान कि अनम्यता का प्रश्न है तो यह भी स्पष्ट है कि “हम भारत के लोग ”....को ध्यान में रखकर बनाया गया है, और आवश्यकताओं की अनुरूपता को लेकर ही इसमें समय समय पर परिवर्तन भी आवश्यक है बशर्ते यह कार्य बड़ी सूझ बूझ के साथ समाविष्ट है ।

पंडित नेहरू ने कहा था कि “इस संविधान को बनाते समय हम इतना ठोस और स्थायित्व देना चाहते थे उतना दे नहीं सके । यद्यपि विश्व संक्रमण के काल से गुजर रहा है, ऐसे भारत में यह तभी संभव हो सकता है कि हम आज जो कुछ कर रहे हैं, कल वही पूरी तरह से लागू न हो सके ”। लेकिन संविधान निर्माताओं ने भारतीय संविधान को बनाने में एक मध्यम मार्ग का अनुसरण किया जो न तो ज्यादा कठोर न ज्यादा नरम। तत्कालीन समय के अनुसार आवश्यक संविधान संशोधन हो सके, तथा अवांछनीय संशोधन को रोका जा सके।

डॉ जेनिंग का कथन है कि भारतीय संविधान को आवश्यकता से अधिक अनम्य बना दिया गया है जब कि सच्चाई यह है कि स्वतंत्रता के इन 70 वर्षों में 107 संविधान संशोधन हो चुके हैं। इसलिए जेनिंग का कथन निराधार प्रतीत होता है तथा अमेरिकी संघीय संविधान में अब तक कुल 26 संविधान संशोधन होने से एक संविधान संशोधन की जटिल प्रक्रिया का परिणाम है ।

डॉ अम्बेडकर ने संशोधन के प्रस्ताव पर कहा था कि “जो संविधान से असंतुष्ट हैं कि उन्हें केवल दो तिहाई बहुमत प्राप्त करना होगा, यदि वे वयस्क मत के आधार पर निर्वाचित संसद में दो तिहाई मत भी नहीं पा

सकते तब यह समझा जाना चाहिए कि संविधान के प्रति असंतोष की स्थिति में जनता उनके साथ नहीं है ।

संविधान के संशोधन हेतु प्रक्रिया (मूल संविधान में ही) संसद की संविधान के संशोधन करने की शक्ति तथा उस हेतु प्रक्रिया 24 वें संविधान संशोधन 1971 में प्रदर्श की गयी ।

अनुच्छेद 368 (1) : 24वें संविधान संशोधन 1971 अधिनियम से अनुच्छेद 368(1) जोड़ा गया इस संविधान में किसी बात के होते हुए संसद अपनी संविधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए संविधान के किसी उपबंध में परिवर्तन, परिवर्धन, या निरसन इस अनुच्छेद में दी गयी प्रक्रिया के अनुसार कर सकेगी।

अनुच्छेद 368 (1) से स्पष्ट है कि इसमें संविधान संशोधन की प्रक्रिया तथा शक्ति दोनों सम्मिलित है तथा इसके द्वारा संविधान के किसी भी उपबन्ध में संशोधन किया जा सकता है तत्कालीन मुख्य न्यायमूर्ति सुब्बाराव ने यह विचार व्यक्त किया कि, इस संशोधन में 'गोलकनाथ के वाद में दिए गए विनिश्चय के प्रभाव को समाप्त कर दिया गया तथा इस संशोधन से संसद की संविधान संशोधन करने की शक्ति का विस्तार कर दिया, जबकि **मिनेर्वा मिल्स 1980 सु.को.** के वाद में यह धारण किया गया कि अनु. 368 (1) आज्ञापक है।

अनु. 368 (3) को 24 वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा जोड़ा गया है, इसके अनुसार अनु.13 की कोई बात इस अनुच्छेद के अन्तर्गत किये गए किसी संशोधन पर लागू नहीं होगी। अपवाद स्वरूप अनु.13 भार. दंड विधान, सी.पी.सी., तथा द.प्र.संहिता में संशोधन पर लागू होगी। अनु. 368 (3) के अन्तर्गत का उद्देश्य संविधान संशोधन विधि तथा सामान्य विधि को विभेदित करता है । अब किसी संविधान संशोधन को अनु. 13 (2) के अंतर्गत चुनौती नहीं दी जा सकेगी।

गोलकनाथ प्रति पंजाब राज्य 1967 सु.को. के वाद में न्यायालय ने 6:5 के बहुमत से शंकरी प्रसाद 1951 सु.को. तथा सज्जन सिंह प्रति राजस्थान राज्य 1965 में दिए गए निर्णय को स्वयं पलट दिया और यह धारण किया कि अनु. 13 में प्रयुक्त 'विधि' शब्द में साधारण विधियाँ तथा संशोधन विधियाँ दोनों ही शामिल हैं | अतः संसद संविधान के भाग 3 में प्रदत्त मूल अधिकारों को समाप्त या न्यूनीकृत नहीं कर सकती।

“ इस अनुच्छेद कि कोई बात अनु. 368 के अंतर्गत किये गए संविधान संशोधन पर प्रयोज्य न होगी ”। स्पष्ट है कि अनु. 368 (4) भी 24 वें संविधान संशोधन 1971 से ही जोड़ा गया ।

केशवानंद भारती 1973 के वाद में 24 वें संविधान संशोधन अधिनियम की संवैधानिक घोषित किया गया | अतः अब किसी भी संविधान संशोधन को अनु.13 की कसौटी पर नहीं परखा जा सकता है अर्थात् अनु. 13 के अंतर्गत सु.को. और उच्चतम न्यायालय किसी भी वाद में 'विधि' की संवैधानिकता या अवैधता की जाँच कर सकती है। स्पष्टतः अनु. 13 न्यायिक - पुनर्विलोकन बताती है, लेकिन अनु. 368 का अनु. 13 के अंतर्गत न्यायिक पुनर्विलोकन न होगा। अनु.13 का अपवर्जन अनु. 368 पर है।

अनु. 368 (4) द्वारा संविधान में भाग 3 शामिल है इसे परिवर्धन द्वारा 42 वा संविधान संशोधन अधिनियम के पूर्व या पश्चात् किये गए या तात्पर्यित किसी संशोधन को किसी न्यायालय में किसी भी आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जायेगा | अनु. 368 (4) संसद की संविधान संशोधन शक्ति को असीमित तथा अनिर्बंधित करता है। इसका उद्देश्य केशवानंद भारती के विनिश्चय से उत्पन्न कठिनाई का निवारण करना था।

मिनर्वा मिल्स प्रकरण में (1980) में यह विनिश्चय किया गया कि अनु. 368 (4) को असंवैधानिक घोषित किया गया तथा यह भी घोषित किया गया कि संविधान संशोधन की सीमित शक्ति संविधान का मूलभूत लक्षण है | अनु. 368 (5) का प्रावधान स्पष्ट रूप से संदेह के निराकरण हेतु यह घोषित किया

गया कि, संविधान के उपबंधों का परिवर्धन, परिवर्तन, या निरसन के रूप में संशोधन करने की संसद की विधायी शक्ति पर किसी प्रकार का निर्बन्धन न होगा | अनु. 368 (5) को भी **मिनर्वा मिल्स के वाद** में असम्बन्धानिक घोषित कर दिया गया| इस प्रकार मिनर्वा मिल के विनिश्चय के बाद अनु. 368 (1)(2)(3) ही प्रभावित रह गए हैं।

अनु. 368 (2) :- अनु. 368 (4) को 24 वें संवि. संशोधन से पुनर्क्रमांकित किया गया जबकि मूल संविधान में यह अनु. 368(1) में ही था। अनु. 368 (2) प्रक्रियात्मक है, के अनुसार- “संविधान संशोधन हेतु संसद के किसी भी सदन में विधेयक प्रस्तुत किया जा सकता है तब दोनों सदनों द्वारा अपनी कुल सदस्यता के बहुमत द्वारा तथा उस सदन की बैठक में उसके उपस्थित सदस्यों के न्यूनतम दो तिहाई बहुमत से पारित हो जाने पर इसे राष्ट्रपति के समक्ष रखा जायेगा। राष्ट्रपति विधेयक को अपनी सम्मति देंगे, तदुपरांत विधेयक के शब्दों के अनुसार ही संविधान संशोधित समझा जायेगा।

24 वें संविधान संशोधन से पूर्व अनु. 368 (2) में “**राष्ट्रपति अपनी सहमति देंगे**” के स्थान पर “**राष्ट्रपति द्वारा सहमति दे दिए जाने पर**” शब्दों का प्रयोग किया गया है | अनु. 368 (2) के परंतुक के अनुसार, निम्नलिखित में कोई परिवर्तन करने हेतु लाये गए संशोधन के मामले में कम से कम आधे राज्यों की विधायिका का अनुसमर्थन आवश्यक होगा।---

- (i) अनुच्छेद 54,55,73,162 तथा 241
- (ii) अध्याय 4 भाग 5-A,
- (iii) भाग 6 का अध्याय 5,
- (iv) भाग 2 का अध्याय 1,
- (v) सातवीं (7) अनुसूची की कोई सूची,
- (vi) अनुसूची 4, संसद में राज्यों का प्रतिनिधित्व,

(vii) अनुच्छेद 368 के उपबंध :

राज्यों के अनुसमर्थन के लिए राज्य विधायिका का संकल्प आवश्यक होगा। यह अनुसमर्थन विधेयक के राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किये जाने के पूर्व प्राप्त किया जाना चाहिए। अनु. 368 (2) के परन्तुक में सातवें संशोधन अधिनियम द्वारा संशोधित किया गया है जिनके द्वारा निम्नलिखित शब्द विलुप्त कर दिए गए हैं,-----“ प्रथम अनुसूची के भाग A तथा B में विनिर्दिष्ट” यह संशोधन राज्यों के पुनर्गठन के फलस्वरूप आवश्यक हो गया था।

संशोधन शब्द का अर्थ ,...पूर्व मुख्य न्यायाधीश ने कहा कि ---

(1) 'संविधान में संशोधन शब्द भिन्न भिन्न अर्थों में प्रयुक्त है, कुछ अनुच्छेदों में यह व्यापक अर्थ रखता है तथा कुछ में सीमित।”

(2) संविधान निर्माता संशोधन शब्द को व्यापकतम अर्थ में प्रयुक्त किये जाने का अर्थ नहीं रखते थे। यह विवक्षित है कि संसद कि संशोधन करने की शक्ति सीमित है ।

(3) कोई भी संशोधन प्रस्तावना तथा संविधान कि परिधि के भीतर ही है।

इंदिरा नेहरु गाँधी प्रति राज नारायण 1975 सु.को. के वाद में आधारभूत लक्षण के सिद्धांत को नया आयाम दिया गया, तथा घोषित किया गया कि मूलभूत लक्षणों की कोई अंतिम एवं पूर्ण सूची निर्मित नहीं की जा सकती। इनमें लक्षण विशेष मूलभूत है या नहीं यह तथ्य एवं परिस्थितियों का प्रश्न है। इस वाद में सु.को. की 'पुनर्विलोकन की शक्ति' का अत्यधिक विस्तार हुआ है ।

शशांक प्रति यूनियन ऑफ़ इंडिया 1981 सु.को. ---अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संसद की संवि. संशो. करने की शक्ति उन सीमाओं के अध्यधीन नहीं है जो अनु. 245 एवं 246 के अंतर्गत विधायन करते समय आरोपित होती है।

विधायी शक्ति के प्रयोग में संसद को यह शक्ति प्राप्त नहीं है कि वह सातवीं

अनुसूची की द्वितीय सूची के विषय पर राज्य द्वारा पारित अधिनियम को विधिमान्य कर दे | अनुच्छेद 368 के अंतर्गत यह राज्य अधिनियम को नविन अनुसूची में शामिल करते हुए विधिमान्य करने के लिए सक्षम है | अतः सातवीं अनुसूची में विधायी शक्तियों का वितरण संसद की अनु. 368 के अंतर्गत संविधान संशोधन करने की शक्ति को नियंत्रित नहीं करता |

संपत कुमार प्रति यूनियन ऑफ़ इंडिया 1987 सु.को. 'न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति' संविधान का आधारभूत ढांचा है, यदि न्यायिक पुनर्विलोकन का पूर्ण अपवर्जन करने के वजाय कोई प्रभावशाली वैकल्पिक संस्थागत व्यवस्था के माध्यम से 'न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था कर दी जाती है, तो यह 'आधारभूत ढांचा' का उल्लंघन न होगा |

मनोहर प्रति यूनियन ऑफ़ इंडिया 1987 बाम्बे

जबतक केशवानंद भारती के प्रकरण में प्रतिपादित मूल ढांचे का सिद्धांत सु. को. की किसी बड़ी पीठ द्वारा अमान्य नहीं कर दिया जाता है तब तक किसी भी संविधान संशोधन को निम्नलिखित आधारों पर चुनौती दी जा सकेगी |

1. प्रक्रियात्मक आधार,
2. सरवान आधार |

प्रकाश प्रति यूनियन ऑफ़ इंडिया 1987 पं. तथा हरियाना .

संविधान में ऐसा कोई संशोधन जिसके द्वारा 'किन्हीं विशेष प्रश्नों' के निर्धारण हेतु "न्यायाधिकरण" का गठन किया गया है तथा उसके "निर्णय को अंतिम घोषित" किया गया हो आधारभूत ढांचे के प्रतिकूल नहीं कहा जा सकता |